



**अन्तरा
शब्दशक्ति**

प्रकाशन एवं बहुउद्देशीय संस्था
www.antrashabdshakti.com

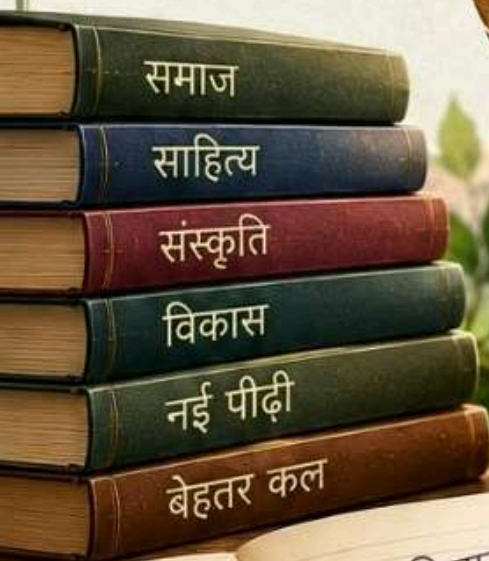
शब्द
से संवेदना तक...
लेखन से
परिवर्तन तक...

हिन्दी
हमारी पहचान
हमारी शक्ति

विचार...
चिंतन...
संवाद...
और
एक बेहतर
कल की ओर...

‘समसामयिक प्रश्नों पर आपकी कलम’

(लेख प्रतियोगिता)



रचनाकार :-

अनुजीत इकबाल

विचारों की
स्याही से
बदलता समाज...

आयोजक:-

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन

वारासिवनी (म.प्र.)



**अन्तरा
शब्दशक्ति**

प्रकाशन एवं बहुददेशीय संस्था
www.antrashabdshakti.com

**हिन्दी
हमारी पहचान
हमारी शक्ति**

शब्द से संवेदन तक...
लेखन से परिवर्तन तक...

कलम की शक्ति, समाज की दिशा

संपादक : डॉ. प्रीति समकित सुराना
तकनीकी संपादक : Webcoodee.com
मुख्य कार्यालय : 15 नेहरू चौक, वारासिवनी,
जिला बालाघाट (म.प्र.) 481331



Antrashabdshaktiprakashan

संपर्क : 9009423393
ईमेल : antrashabdshakti@gmail.com
वेबसाइट : www.antrashabdshakti.com

वैधानिक सूचना

पुस्तक में प्रकाशित सभी रचनाएँ संबंधित रचनाकारों की मौलिक अभिव्यक्तियाँ हैं।
प्रत्येक रचना में व्यक्त विचार, कथ्य एवं अभिमत के लिए संबंधित रचनाकार स्वयं उत्तरदायी हैं।
रचनाओं के चयन एवं प्रकाशन का उद्देश्य साहित्यिक अभिव्यक्ति को मंच प्रदान करना
एवं हिन्दी लेखन को प्रोत्साहित करना है।

**हिन्दी
से ही है
पहचान...**

विचार...
संवाद...
समाज...
और एक बेहतर कल...

लेख प्रतियोगिता

लेखक/लेखिका - अनुजीत इकबाल

भारतीय दर्शन में स्त्री-रहस्यवाद की गूंज



भारतीय दर्शन में स्त्री-रहस्यवाद की गूंज

ज्ञान के संकलन, संरक्षण और इतिहास को लिपिबद्ध करने का कार्य सदियों तक मुख्य रूप से पुरुषों के एकाधिकार में रहा। पुरुष इतिहासकारों और टिप्पणीकारों ने जाने-अनजाने केवल उन्हीं विचारों और विचारकों को केंद्र में रखा जो उनकी अपनी मानसिक संरचना और सामाजिक व्यवस्था के अनुकूल थे। महिला संतों के तीव्र विद्रोह, उनकी सामाजिक आलोचना और उनके सूक्ष्म दर्शन को या तो केवल भावुकता कहकर तुच्छ मान लिया गया, या फिर उन्हें 'पतिव्रता', 'साध्वी' या 'अनन्य भक्ता' के पारंपरिक, सुरक्षित और सीमित चौखटों में संकुचित कर दिया गया।

समय की महीन परतों के भीतर एक स्त्री खड़ी है, निःशब्द, निसंग, निष्कंप। चौदहवीं शताब्दी की कश्मीर घाटी की बर्फीली हवाओं में केवल हाड़-मांस को कंपा देने वाली शीतलता ही नहीं थी, वहां शास्त्र, संस्कृत और धर्म के रूढ़ ढाँचे भी थे, जो मनुष्य और उसके आंतरिक ईश्वर के बीच एक अभेद्य प्राचीर बनकर खड़े थे। उसी घाटी में उभरी लल्लेश्वरी, जिन्हें लोक ने 'ललदद्य' कहा। ललदद्य का होना केवल एक संत का होना नहीं था, वह कश्मीरी शैव दर्शन का शास्त्रीय संस्कृत के बंद, घुटते हुए कमरों से बाहर निकलकर जनमानस की सहज भाषा में घुल जाना था। उन्होंने उस दर्शन को शास्त्रों के कठिन क्लिष्ट शब्दों से मुक्त किया और आमजन की भाषा में इस तरह पिरोया जैसे कोई कपास कातते हुए अपने पूरे अस्तित्व को उसमें पिरो देता है। उनकी इस काव्य-शैली को 'वाख' कहा गया। वाख कोई साधारण पद नहीं हैं, वे आत्मा के सीधे साक्षात्कार से फूटे हुए वे बिंदु हैं जहां शब्द समाप्त होते हैं और परम शून्य का स्पंदन प्रारंभ होता है।

लल्लेश्वरी ने जब अपने भीतर के शिव को पहचाना, तो बाहर के सारे कृत्रिम आवरण स्वतः गिर पड़े। उन्होंने जातिगत संकीर्णताओं, सामाजिक कुरूपताओं और खोखले वैवाहिक बंधनों को उसी क्षण खारिज कर दिया, जब उन्हें यह बोध हुआ कि देह की सीमाएं आत्मा के आकाश को बांध नहीं सकतीं। उनका विद्रोही स्वर किसी बाहरी शोर का मोहताज नहीं था, वह तो एक आंतरिक ज्वाला की तरह शांत किंतु अनवरत प्रज्वलित था। उन्होंने लिखा कि शिव ही सर्वव्यापी हैं, हिंदू और मुसलमान में भेद न कर, यदि तू बुद्धिमान है तो स्वयं को पहचान, वही ईश्वर से सच्ची पहचान है। इस एक उक्ति में ललदद्य ने सदियों से चले आ रहे पाखंड और भेद की दीवारों को एक ही झटके में ढहा दिया। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि ईश्वर की खोज किसी दूरस्थ मंदिर या मस्जिद में नहीं, बल्कि स्वयं की चेतना के गहन अंधकार में उतरने से होती है। लल्लेश्वरी ने न केवल आध्यात्मिक ज्ञान की गुप्त धाराओं को जन-जन तक पहुँचाया, बल्कि कश्मीरी भाषा और उसके साहित्य की वह सुदृढ़ नींव रखी जिस पर सदियों का चिंतन आकार लेता रहा। इसके बावजूद, इतिहास की विडंबना देखिए कि आधुनिक विमर्शों ने इस महान दार्शनिक को केवल एक 'स्थानीय लोक-संत' की संकुचित श्रेणी में बाँधकर छोड़ दिया। जिस लल्लेश्वरी का चिंतन अद्वैत वेदांत की सर्वोच्च गहराइयों और सूफीवाद की तरलता का अत्यंत दुर्लभ और सुंदर संगम था, उन्हें मुख्यधारा के दार्शनिक इतिहास के पन्नों पर वह स्थान नहीं मिला जिसकी वे पूर्णतः अधिकारिणी थीं।

उसी तरह, कर्नाटक की बारहवीं शताब्दी की वीरशैव भक्ति क्रांति की वह दिव्य ज्योति, अक्का महादेवी, देह और समाज के अहंकार पर एक शाश्वत प्रश्नचिह्न की तरह उपस्थित होती हैं। अक्का महादेवी का पूरा जीवन केवल एक साधना नहीं, बल्कि इस सामाजिक ढाँचे के विरुद्ध एक अत्यंत गहरा और सूक्ष्म विद्रोह था। जब राजा कौशिक की वासनापूर्ण और अधिकारवादी दृष्टि ने उनके अस्तित्व को बाँधना चाह, जब उन पर एक लौकिक विवाह का दबाव बनाया गया, तब अक्का ने अपनी आँखें बंद कीं और उस परम सत्य को देखा जो काल से परे था। उन्होंने निडर होकर घोषणा की कि उनका स्वामी, उनका पति कोई नश्वर मनुष्य नहीं, बल्कि 'मल्लिकार्जुन' अर्थात् मल्लिका के पुष्प समान कोमल और सुंदर शिव हैं। यह केवल एक आध्यात्मिक वाक्य नहीं था, यह अपनी स्वायत्तता की अंतिम पराकाष्ठा थी।

समाज जिस स्त्री को केवल उसकी देह के माध्यम से मापता है, उसी देह के अहंकार और सामाजिक लज्जा के झूठे आवरणों को अक्का ने एक झटके में त्याग दिया। उन्होंने वस्त्रों का परित्याग कर दिया और अपने लंबे, घनघोर केशों को ही अपना आवरण बना लिया। उनका यह रूप सामाजिक लज्जा से परे उस नग्न सत्य का प्रतीक था जहाँ आत्मा अपने समस्त प्राकृतिक रूप में प्रकट होती है। उनके 'वचन' साहित्य में दर्शन की जो सघनता और सामाजिक विद्रोह की जो तीक्ष्णता झलकती है, वह विस्मयकारी है। अक्का महादेवी ने उस युग में यह प्रश्न पूछा कि जब आत्मा का कोई लिंग नहीं होता, जब चेतना पूर्णतः लिंगातीत है, तो यह समाज बारंबार स्त्री की केवल देह पर ही नियम, मर्यादाएँ और बंधन क्यों थोपता है? आज कन्नड़ साहित्य में अक्का महादेवी का नाम अत्यंत श्रद्धा और सम्मान से लिया जाता है, परंतु जब राष्ट्रीय और वैश्विक दार्शनिक सम्मेलनों, विमर्शों और ग्रंथों की बात आती है, तो अक्का महादेवी को वह वैश्विक स्थान प्राप्त नहीं होता जो प्लेटो या सुकरात जैसे पुरुषों को सहज ही दे दिया गया।

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में, बलूचिस्तान के एक अत्यंत वैभवशाली शाही परिवार में जन्मी गुलरुख, जो कालान्तर में 'हज़रत बाबा जान' के नाम से जानी गई, सूफी रहस्यवाद की उस ऊँचाई पर विराजमान थीं जहाँ पहुँचना साधारण चेतना के पार की बात है। सांसारिक सुखों, रेशमी वस्त्रों और राजसी वैभव की निरर्थकता को उन्होंने बहुत छोटी आयु में ही भांप लिया था। आध्यात्मिक सत्य की तीव्र प्यास में उन्होंने अपने महलों के द्वार सदा के लिए छोड़ दिए। वे भटकती रहीं, कठोर तपस्या, निराहार साधना और एकांत चिंतन के बीहड़ पथों पर चलती रहीं। अंततः वे महाराष्ट्र के पुणे शहर में आई और एक पुराने नीम के पेड़ के नीचे अपना स्थायी डेरा जमाया। वह नीम का पेड़ केवल एक वृक्ष नहीं रहा, वह संपूर्ण मानवता का आश्रय स्थल बन गया। जाति, धर्म, वर्ग और लिंग की सीमाओं से परे, हर प्रकार के दुखी और जिज्ञासु जीव उस बूढ़ी सूफी फ़कीर के पास आते थे। बाबा जान का आध्यात्मिक कद इतना विशाल था कि आधुनिक काल के महान आध्यात्मिक गुरु मेहर बाबा ने उन्हें अपना पहला गुरु स्वीकार किया था।

मेहर बाबा के अनुसार, बाबा जान के केवल एक स्पर्श और उनके मस्तक पर दिए गए एक चुंबन ने ही उन्हें क्षण भर में 'ईश्वर-अनुभूति' की उस परम चेतना में पहुँचा दिया, जहां संपूर्ण ब्रह्मांड एक हो जाता है। एक मुस्लिम महिला का सूफी संत परंपरा में इस सर्वोच्च आध्यात्मिक सत्ता पर आसीन होना इतिहास की एक अभूतपूर्व घटना थी, किंतु सूफी इतिहास के आधिकारिक पन्नों और मुख्यधारा की धार्मिक चर्चाओं में हज़रत बाबा जान का नाम लगभग पूरी तरह विस्मृत कर दिया गया।

यह प्रश्न केवल एक ऐतिहासिक नहीं है, बल्कि हमारी सांस्कृतिक और दार्शनिक चेतना पर एक गहरा घाव है। ऋषिकाओं, महिला संतों और रहस्यवादियों का इस प्रकार धीरे-धीरे हाशिये पर धकेल दिया जाना कोई आकस्मिक घटना नहीं थी, इसके पीछे शताब्दियों से चले आ रहे गहरे सामाजिक, सांस्कृतिक और संस्थागत तंत्र सक्रिय थे।

समाज की दृष्टि हमेशा से स्त्री को उसकी आत्मा से पहले उसकी देह के माध्यम से देखने की अभ्यस्त रही है। जब अक्का महादेवी, लल्लेश्वरी या मीराबाई जैसी चेतनाओं ने देह के बंधनों, सामाजिक लज्जा और कुलीन मर्यादाओं को ध्वस्त किया, तो समाज ने उनकी आध्यात्मिक ऊँचाई को स्वीकार करने के बजाय उन्हें 'पागल' या 'विद्रोही' घोषित कर दिया। उनकी चेतना की दार्शनिक गहराई पर चर्चा करने के स्थान पर समाज केवल उनके कपड़ों, उनके आचरण और उनकी देह पर ही विवाद खड़े करता रहा। इसके अलावा, पुरुष ऋषियों, आचार्यों और दार्शनिकों के विचारों को बड़े-बड़े मठों, आश्रमों और विश्वविद्यालयों द्वारा ग्रंथों में लिपिबद्ध करके संरक्षित किया गया। इसके विपरीत, अधिकांश महिला संतों ने आम जनमानस की लोक-भाषाओं में गाया, जो मौखिक परंपराओं, लोकगीतों और गाँव-देहात की स्मृतियों में ही जीवित रहा। संस्थागत लिखित संरक्षण न मिलने के कारण समय की धारा के साथ उनकी अनेक अमूल्य रचनाएँ सदा के लिए लुप्त हो गईं।

इतिहासकारों और दार्शनिकों ने चिंतन की दुनिया को दो कृत्रिम हिस्सों में बाँट दिया, पुरुषों के चिंतन को 'ज्ञान मार्ग' कहा गया और स्त्रियों की आध्यात्मिक अभिव्यक्ति को 'भक्ति मार्ग'। यह विभाजन स्वयं में अत्यंत पक्षपातपूर्ण है। गार्गी का राजा जनक की सभा में किया गया अकाट्य तर्क हो या लल्लेश्वरी के 'वाख' में छुपा सूक्ष्म शैव-अद्वैत दर्शन, यह शुद्ध ज्ञान और तर्क की सर्वोच्च स्थिति है। उन्हें केवल भावुक भक्ति की श्रेणी में धकेल देना उनके दार्शनिक चिंतन के साथ बहुत बड़ा अन्याय है।

भारत की आध्यात्मिक और दार्शनिक परंपरा तब तक आंशिक, एकांगी और अपूर्ण ही रहेगी, जब तक कि इसमें ऋषिकाओं, महिला संतों और रहस्यवादियों के अमूल्य योगदान को पूर्ण समानता और सम्मान के साथ पुनर्स्थापित नहीं किया जाता। आज के समय में गार्गी, मैत्रेयी, लोपामुद्रा, लल्लेश्वरी, अक्का महादेवी और हज़रत बाबा जान के दर्शन को केवल साहित्य या लोक-कथा के अंश के रूप में नहीं, बल्कि मुख्यधारा के भारतीय दर्शन के अनिवार्य भाग के रूप में प्राथमिक विद्यालयों से लेकर विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में शामिल किया जाना चाहिए। साथ ही, इन महिला संतों के लुप्तप्राय साहित्य, मौखिक वाखों, वचनों और लोक-गीतों का वैज्ञानिक और दार्शनिक अध्ययन किया जाना चाहिए।

आज के आधुनिक समाज को यह पुनः याद दिलाने की आवश्यकता है कि भारत की मूल आध्यात्मिक चेतना में लिंग के आधार पर ज्ञान का कोई विभाजन कभी था ही नहीं। ज्ञान लिंगातीत है और यह संदेश इन ऋषिकाओं के जीवन और दर्शन से ही सबसे प्रामाणिक रूप में प्राप्त होता है।

भारत की आध्यात्मिक धरोहर केवल पुरुषों के चिंतन, आचार्यों के भाष्यों और ऋषियों के आश्रमों की कथा नहीं है। जब तक लोपामुद्रा की ऋचाएँ, गार्गी के तर्क, लल्लेश्वरी के रहस्यमयी वाख, अक्का महादेवी के विद्रोही वचन और बाबा जान की सूफी चेतना समाज के मानस में पुनर्जीवित नहीं होतीं, तब तक हमारा सांस्कृतिक, नैतिक और दार्शनिक इतिहास अपूर्ण, एकांगी और अधूरा ही रहेगा।

– अनुजीत इकबाल



लेखक परिचय

नाम –अनुजीत इकबाल
ग्राम - लखनऊ उत्तर प्रदेश





अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)

अन्तरा
शब्दशक्ति

www.antrashabdshakti.com
प्रकाशन एवं बहुदेशीय संस्था

कलम की शक्ति, समाज की दिशा

सम्मान-पत्र

यह प्रमाणित किया जाता है कि

आ.....**अनुजीत इकबाल**.....जी

ने हिन्दी पखवाड़े के अवसर पर आयोजित "एक लेख प्रतियोगिता" में उत्साहपूर्वक सहभागिता करते हुए **समसामयिक विषय पर अपने विचारों** को प्रभावी एवं सार्थक ढंग से अभिव्यक्त किया।

उनकी साहित्यिक **अभिव्यक्ति** एवं रचनात्मक सहभागिता की सराहना करते हुए **अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन** की ओर से यह **सम्मान-पत्र** सादर प्रदान किया जाता है।

आपकी सृजनशीलता एवं साहित्यिक यात्रा के उज्ज्वल भविष्य की हार्दिक शुभकामनाएँ।

हिन्दी विचारों को विस्तार देती है... समाज को जोड़ती है...

हिन्दी
हमारी पहचान...
हमारी शक्ति...

प्रीति सुराना

समकित सुराना

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
एवं संस्था

डॉ. प्रीति समकित सुराना



शब्द से संवेदन तक...

लेखन से परिवर्तन तक...

